# मधुरजनी

(१९४६–'४९ के गीत)

रचयिता
रामगोपाल शर्मा 'दिनेश'

राजस्थान साहित्य अकादमी (संगम)
उदयपुर (राजस्थान)

प्रथम संस्करण १९६६ ई०

---

मूल्य ८ रुपए

---

मुद्रक
केशव आर्ट प्रिंटर्स, अजमेर

# दो शब्द

डॉ० रामगोपाल शर्मा 'दिनेश' द्वारा प्रणीत "मधुरजनी" उनके प्रगीतो का संग्रह है। इसकी पूर्ववर्तिनी उनकी अनेक रचनाएँ बहुमुखी प्रतिभा का प्रकाशन करने वाली है। उन्होने विविध विषयो पर साहित्य की विविध विधाओ की रचना की है। प्रबन्ध काव्य प्रगीत, देशभक्तिपूर्ण कविताएँ और आलोचना ग्रन्थो के अतिरिक्त उन्होने अनेक नाटक भी लिखे है। ऐसे अनुभवी लेखक की "मधुरजनी" कृति भी अपनी विशेषताएँ रखती है। इस पर लेखक को राजस्थान साहित्य अकादमी का पुरस्कार भी प्राप्त हो चुका है।

"मधुरजनी" मे मूलत जीवन की मधुर और सुकुमार अनुभूतियो का प्रकाशन है और ये रचनाएँ सभी गीत रूप मे है। इसलिए यह कृति आधुनिक हिन्दी गीति की परम्परा मे है। यो तो आज का नया कवि गीत-काव्य को पुरान काव्य के रूप मे उपेक्षित करता है और वह नयी अनुभूति-चेतना को समग्र जटिलता के साथ प्रकट करने वाले कृतित्व को ही आज की कविता के रूप मे स्वीकार करता है, परन्तु गीत-काव्य सदैव मानव समाज को प्रिय रहेगा और उसे उपेक्षित नही किया जा सकता। यह बात अलग है कि हमारे अनेक आधुनिक गीतो मे वह नवीनता नही मिलती, जो कि नयी कविता की कुछ अच्छी रचनाओ मे प्राप्त होती है, फिर भी गीत काव्य हम आनन्द प्रदान करता है इसमे कोई सन्देह नही। नयी कविता मे बौद्धिकता अधिक है लेकिन गीतो की विशेषता यह है कि वे चिन्तन वृत्ति को सुला कर उसको विश्रान्ति दे कर चित्त को आनन्द प्रदान करते है। आज के समाज को जो कि चिन्तन

से अधिक चिन्ता से आक्रान्त है, ऐसे गीत काव्य की अधिक आवश्यकता है जो उसे शान्ति और तन्मयता प्रदान करने वाला आनन्द दे सके। यह मानसिक आनन्द आधुनिक विज्ञान के अन्य कोई साधन नही दे पाते। आज का कथा साहित्य भी इस प्रकार का आनन्द न देकर चिन्ता को जागृत करने की विशेषता रखता है। हमे अपनी ही समस्याओ की चिन्ता से छुटकारा पाना मुश्किल हो जाता है और कथाकार अनेक नये काल्पनिक पात्रो की उलझनो और चिन्ताओ से हमे अभिभूत कर देता है। अत उससे मुक्ति पाने के लिए "मधुरजनी" जैसे गीत काव्य की आनन्दमय स्वरलहरी हमारे लिए आवश्यक है।

"मधुरजनी" सग्रह मे "दिनेश" जी ने अपनी जीवन, प्रकृति और अध्यात्म सम्बन्धी अनुभूतियो को व्यक्त किया है। वैसे यह कृति छायावादी गीति काव्य की परम्परा मे है और इसको पढने पर ऐसा लगता है जैसे हम उसी युग के वातावरण मे विचरण कर रहे हो। प्रकृति से सम्बन्ध रखने वाले इसमे कुछ गीत सुन्दर बिम्बो को प्रस्तुत करते है और व बिखरते हुए मन को रमाने की शक्ति भी रखते है। आज के गीतकार से देश की कुछ अपनी अपेक्षाएँ है। वह ऐसे गीत चाहता है कि जो हमारी समन्वित संस्कृति को प्रकट करने वाली व्यापक चेतना को अभिव्यक्ति देते हो और जिनका एक एक स्वर, एक एक शब्द गहरे भावो की झकृति प्रकट करने वाला हो। मुझे आशा है कि 'दिनेश' जी आगे ऐसे गीतो की भी रचना अवश्य करेंगे।

(डा भागीरथ मिश्र

आचार्य तथा अध्यक्ष, पूना विश्वविद्यालय पूना

# प्रकाशकीय

यह काव्यकृति सन् ६०-६१ मे अकादमी द्वारा एक हजार रुपये मे पुरस्कृत की गई है। अकादमी का एक नियम है कि यदि पाण्डुलिपि अकादमी पुरस्कार प्राप्त करे और लेखक उसे अकादमी द्वारा प्रकाशित करवाना चाहे तो उसे अवश्य ही प्रकाशित किया जाए।

यह कृति अनेक कारणो से देर से प्रकाशित की जा सकी है। पुरस्कृत पाण्डुलिपिया शीघ्र ही प्रकाशित की जा सके इस सम्बध मे भविष्य मे सचेत रहा जाएगा और अनावश्यक देरी से बचा जाएगा।

प्रसन्नता की बात है कि अकादमी की परिवर्तित प्रकाशन नीति के अतगत प्रात के कृतिकारो की कृतियाँ स्वतत्र रूप से भी प्रकाश मे आ सकेगी।

डा० 'दिनेश' राजस्थान साहित्य अकादमी द्वारा दो बार पुरस्कृत हो चुके है। दूसरी बार ६२-६३ मे आपका 'सारथी' महाकाव्य पुरस्कृत किया जा चुका है। एक दृष्टि से डा० दिनेश को व उनके साहित्य सृजन को हम उपलब्धि समझकर प्रात के साहित्यिक गौरव के प्रति आश्वस्त हो सकते है। आपकी कृतिया अन्य प्रातो मे व अखिल भारतीय स्तर पर अनेक पुरस्कार प्राप्त कर चुकी है। आप सतत सृजनशील साहित्यकार है और आपकी बहुमुखी प्रतिभा अकादमी को गौरव प्रदान करेगी ऐसी आशा है।

डा० दिनेश की इस पुस्तक की कृतिया का पाठको द्वारा रेडियो तथा पत्र पत्रिकाओ के माध्यम से स्वागत किया जा चुका है अत हम इस पुस्तक की लोकप्रियता के प्रति भी आश्वस्त है।

मगल सक्सेना
साहित्य सचिव

१३-३-६६

# सकेतिका

# १

सुधामयि ! गीत का वर दो ।
मधुर संगीत का स्वर दो ॥

मचलती कल्पना मेरी,
तुम्हारे स्नेह मे लय हो ।
उडे उन्मुक्त अम्बर मे,
न धरती का उसे भय हो ।

नई गति से,
नई लय से,
भरे जीवन—

कि ऐसे मुक्त मधु-पर दो
सुधामयि ! गीत का वर दो ।

सिहरती विश्व वीणा के,
सृजन स्वर तार बन जाएँ।
हृदय के भाव अलि! मेरे,
मधुर झंकार बन जाएँ।

नए स्वर से,
नए रस से,
भरे जीवन—

जगत् में जागरण भर दो।
सुधामयि! गीत का वर दो॥



२

ज्योतिमय हे जीवन के धन !

जीवन मे आलोक भरो,
जीवन में आलोक !

हो प्रकाश मय जग का जीवन
आलोकित जीवन का क्षण-क्षण,
वसुधा के कण-कण मे, हे प्रभु !
अपनी कोमलतर किरणो से—

कोमलतम आलोक भरो,
कोमलतम आलोक !

विस्मित जग-शिशु के आनन पर,
सुधा हास से अधर नयन भर,
धीरे-धीरे ज्योति लहर बन,
उतरो उतरो हे ज्योतिमय !

अंतर मे आलोक भरो
अंतर मे आलोक ।

ज्योतिमय हे जीवन के धन !
जीवन मे आलोक भरो
जीवन मे आलोक ।



## २

माँ, मेरी तन्त्री के तार

भर दे, झंकृत हो मधु-स्वर मे,
गुञ्जित-मुखरित हो घर-घर मे,
लय चिर मधु-लय बन जग भर मे,
ज्योतिमय साकार।

माँ, मेरी तन्त्री के तार

दे वरदे, अपना वर मराल
मेरे गीतो के विहग बाल—
चढ, उड नभ-तरु की डाल-डाल
बरसें बन घनसार।

माँ, मेरी तन्त्री के तार

मेरे गीतो मे सागर घिर—
आए, बरसें नभ-तारक तिर,
वह जाए मलयज मधुर मदिर,
बिखरा स्मित-नीहार।

माँ, मेरी तन्त्री के तार

सपने विस्मृति के कितने सुख ?
अपने समृति के कितने दुख ?
निशि-दिन के तारो-से दुख-सुख,
गीतो के इस पार।

माँ, मेरी तन्त्री के तार॥



४

तुम हो असीम, तुम हो अपार
सुन्दर स्वरूप, पर निराकार।

अनिलानल - रवि शशि-तारा-ग्रह
नीलम-नीरधि, यह शून्य गगन,
वन-उपवन-मरु उत्तुङ्ग अचल,
निस्तब्ध नियति का शांति सदन,

'तुम अन्त-हीन, अक्षय अनादि'
इन सबका यह सन्तुलित सार।
तुम हो असीम, तुम हो अपार,
सुन्दर स्वरूप पर निराकार।

आ जाते लहर-लहर बादल,
छा जाते उमड़-घुमड़ बादल,
परिवर्तन हो चलता प्रति पल,
मच जाती विश्व नई हल-चल,

'अभिनय की सीमा तुम असीम'
सन्देश सुनाती सलिल - धार।
तुम हो असीम तुम हो अपार,
सुन्दर स्वरूप, पर निराधार।

चञ्चल चपला का क्षणिक हास
कर जाता अंकित अम्बर-पट,
भर जाते मानस में मधुरिम!
भर जाता प्यासे का पनघट।

अपनी असंख्य अपलक आँखें,
खोले रहता जग निराधार!
तुम हो असीम, तुम हो अपार,
सुन्दर स्वरूप, पर निराकार॥

नीले नभ में निर्मल नीरद
किलकारी भर क्रीडा करते।
ज्योत्स्ना नाचती जब उन पर
'तुम क्या हो' कवि सोचा करते।

तब शरद् यामिनी का अञ्चल,
उडकर कहता—'तुम निर्विकार।'
तुम हो असीम, तुम हो अपार,
सुन्दर स्वरूप, पर निराकार॥

नौका पर बैठे नाविक के,
अलसाए नयन भटक जाते।
'सागर का कोई छोर मिले'
खोजते - खोजते बढ जाते।

होकर फिर वह विस्मय-विभोर
कह उठता—'तुम सचमुच अपार।'
तुम हो असीम, तुम हो अपार,
सुन्दर स्वरूप, पर निराकार।

५

१

विहग-कलरव की वेला कौन—
बहाता मधु का मधुर प्रवाह ?
विजन नीरव नीडो के द्वार—
कर रही क्रीडा किसकी चाह ?
गूँजता दिग् दिगन्त को चीर,
अहा ! किसका वह शुभ संगीत ?

२

श्रान्त तरु-मर्मर-ध्वनि कम-साथ,
निकलती नीरव उपवन छोड ।
निकलते यामा-शिशु चुपचाप,
लगाते शशि प्रकाश से होड ।
ओह ! तब कौन कहाँ पर बैठ,
सुनाता है वह शुभ संगीत ?

## ३

रम्य राका-शशि-रश्मि अधीर,
सुधा मे सीच सृष्टि, निज हास—
मिलाती है स्वप्नो से, शून्य—
खिलखिला उठता था उल्लास।
सुप्त सस्रुति कणों मे ओह !
गूँजता तब किसका सगीत ?

## ४

स्वर्ग की स्वप्निल पलकें खोल
सिहर इठला उठता आलोक।
कल्पतरु के कुसुमो को चूम,
पवन आता सुरभित इस लोक।
मिला होता है उसमे ओह !
न जाने किसका शुभ सगीत।

## ५

विश्व कर स्वप्नो से तब प्यार,
अहा ! भूला रहता है मूढ।
समस्याओ का पारावार,
उमड़ता अति अपार अति गूढ।

इधर लुटता है ओह ! अमूल्य,
न जाने किसका शुभ संगीत ।

६

नील नग से नव निर्झर फूट,
अश्रु सा करुणा का सन्देश—
उमड पडता है जब वेरोक
सुनाता चतुर नियति आदेश
विहरता वन वसुधा मे ओह !
कौन वह जिसका शुभ संगीत ?

७

न जाने कौन नीर नव राशि,
सजाने सुभग चन्द्रिका चीर
छोड बिखरा देता है दौड
अतुल मुक्ता-सी नग-सिर-चीर ।
कलित कल कल स्वर लहरी लोल
सुनाती तब किसका संगीत ?

८

समझ कर सरिता सूनी रात,
पुलकती करने नव अभिसार ।

दौड, कर आलिंगन, कर प्रेम,
किया करती स्वच्छद विहार।
और हो प्रिय मे एकाकार
सुनाती मुझे मिलन-संगीत।

६

हृदय मे भर कर गहरी आह,
स्वप्न से सहसा उठता जाग।
छिपाने आखो की बरसात
छेड़ देता हूँ करुणा-राग।
और फिर उसको लय मे लीन,
सुना करता हूँ प्रिय-संगीत।



६

आओ अनन्त, अति लघु बन कर।

नश्वर जीवन, वरदान-चाह,
अभिशाप न अब तक पहचाना।
क्या लायेगा भावी प्रभात,
कब स्वप्न-चितेरे ने जाना।

रंग रहा चित्र प्रति-पल हँस कर।
आओ अनन्त, अति लघु बन कर।

नीरव-निशीथ-तम-तरल-तन्त्र,
सूनी निश्वासें निकल रहीं।
पहचान न पाया आदि अन्त,
कब का पथ पर कुछ ज्ञात नहीं।

पाया न किनारा चल-चल कर।
आओ अनन्त, अति लघु बन कर॥

पलकों में रश्मिल सपने भर,
सो गया तिमिर, पी ज्योति-लहर।
नन्दन कानन का स्वर्ण-हास,
भर कर दीपों के प्राणों मे,

क्या स्वर्ग धरा पर लाई हो ?

ज्योतिर्मुखि ! कवि की अभिलाषा,
आशा की चल परिभाषा—सी,
झिलमिल भाषा मे बोल रही।
भर स्नेह चपलता नयनों मे,

क्या मधुमयि ! झरने आई हो ?



८

इस पर्दे को दूर करो हे !

सुधा पान कर सोई आशा,
सफल हो उठे जीवन पाकर,
सुख मे दुख परिणत हो जाए,
विश्वेश्वर ! अभिशाप बने वर ।

महा शून्य मे विहँस पडो हे !
इस पर्दे को दूर करो हे !!

कैसी धूप ? कहाँ की छाया ?
अन्त-हीन आलोक उदय हो ।
गहन तिमिर की काली काया,
महालोक मे नाथ, निलय हो ।

शत-शत दिनकर से दमको हे !
इस पर्दे को दूर करो हे !



## ९

कौन तुम वरदान बन मेरे हृदय मे आ गये !

आँसुओ की सृष्टि मेरी,
धो रही पद-चिह्न किसके ?
कौन तुम आलोक बन,
मेरे उदय मे छा गये ?

कौन तुम वरदान बन मेरे हृदय मे आ गये !

यामिनी डूबी सुधा मे,
हो गई आहे अपरिचित,
खो गया सागर लहर मे
वर बने अभिशाप संचित,

कौन तुम मधुमास बन मेरी प्रलय मे छा गये !

गा रही मेरी दिशाएँ,
आज क्यो मधुगीत जाने !
आ रही झंकार आकुल,
क्यो कहो मुझको मनाने !

कौन तुम जयकार बन मेरी विजय मे छा गये !

कौन तुम वरदान बन,
मेरे हृदय मे आ गये !



१०

कर रही शृङ्गार नभ मे, आज वासन्ती रजनि !

नीरनिधि नीरव दिशा मे
स्वप्न-सुमनो पर पवन सा
सो रहा आँखें बिछाए
दूर पथ पर कौन आए !

झाँकती दर्पण हृदय मे, आज वासन्ती रजनि !

रश्मि हिमकर-हेम-स्मित ले,
झूम क्षण नीले गगन में,
विश्व के प्यासे अधर पर
ढालती मधु-रस हृदय-भर।

झर रही मधु ज्योत्स्ना में आज वासन्ती रजनि!

नूपुरों की मदिर ध्वनि में,
आज किसके गीत सोये?
कौन रे सूने गगन में!
कौन अधरों के मिलन में?

चाहती अभिसार किससे आज वासन्ती रजनि?

कर रही शृंगार नभ में,
आज वासन्ती रजनि!

●

११

मधु स्नात मेरी गगन-गगा मे विहँसती यामिनी ।

चल पडे आलोक-पथ पर,
दृग सजल मनुहार बन कर ।
आँसुओ मे भर मधुरता,
पलक मे छवि-भार भर कर ।

जलजात के कोमल दलो पर
क्यो विहरती चांदनी ?

मधु स्नात मेरी गगन-गगा मे विहँसती यामिनी ॥

सिंधु - फेनिल - उर्मियों - सी,
रश्मियाँ भिलमिल पुलकती ।
स्वर्ण-सुमनों पर सुचचल,
चिर-कसक-मधु जल बरसती ।

मधु गीत बन मेरे हृदय मे,
नित कसकती रागिनी ।

मधु-स्नात मेरी गगन गगा मे विहँसती यामिनी ॥



१२

मेरे नन्दनवन मे उतरी,
पुलकित मधुरजनी ।

कलियो को नव यौवन देती,
भरती मधु पराग से अन्तर
मेरे मधु–कानन मे उतरी,
सुरभित मधुरजनी ।

मेरे नन्दनवन मे उतरी,
पुलकित मधु रजनी ।

शरद्-गगन सित घन स्वप्नो मे
सत्य सुन्दरम् के नव स्वर भर,
मेरे मधु-मानस मे उतरो
विलसित मधुरजनी ।

मेरे नन्दनवन मे उतरो
पुलकित मधुरजनी ।

कलकल ध्वनि गुञ्जित लहरो पर
शिथिल समीरण के पग धरती
मेरे मधु अम्बर से उतरो
विकसित मधुरजनी ।

मेरे नन्दनवन मे उतरो,
पुलकित मधुरजनी ।।



## १३

नयनो के निर्झर झरते हैं !

मधु मानस सर से भर मधु जल,
युग युग से मधु घन बन प्रति पल,
सकरुण मरु के कण कण मे घिर,
मधुरस की बरसा करते हैं ।

नयनो के निर्झर झरते हैं ।।

फेनिल लहरो का अवगुण्ठन
बेसुध पलको मे चल चितवन
दृग–उन्मीलन मे प्रियतम के,
पद-पकज धोया करते हैं।

नयनो के निझर झरते हैं।

आशा के मृदुतम कूलो पर,
मनुहारो की मधु-भूलो पर,
आँसू बन प्रियतम के पथ मे,
मोती बिखराया करते है।

नयनो के निझर झरते है।



१४

हिम जल से धो–धो करुण–नयन,
निशि अ तरतम ज्योतित करती ।

नभ की गगा मे स्वर्ण सुमन,
अपनी अलसित आखे खोले,
पथ देख रहे परदेशी का ।
युग से जल-जल उ मन उ मन ।

सुधि आ आ निद्रित पलको मे,
स्वप्नो की चल ससृति भरती ।

हिम जल से धो धो करुण नयन
निशि अ तरतम ज्योतित करती ।

सागर की रश्मिल चल लहरें,
जीवन-स्पन्दन मे बन मिटती।
बेसुधपन के फेनिल पट मे,
चल तारक-परियो सी बिहरें।

रजनी उनके मधु-कलरव मे
मृदु मर्मर गीतो सी झरती।

हिम जल से धो धो करुण नयन,
निशि अन्तरतम ज्योतित करती॥



१५

जाने क्यों इन प्राणों में,
अगणित लघुतम स्पन्दन पुलकित।

चंचल जल-कण अपलक युग दृग,
अन्तस्तल में लहरित सागर,
फेनिल-रस शिखरों पर चित्रित,
सूने सपने तारक छवि भर,

झिलमिल आलोक-लहर-सी,
उठती प्रतिपल क्षण क्षण विकसित।

शत-शत नक्षत्र ग्रह शशि दिनकर
आ आकर उसमे तिरते हैं,
मेरे प्राणो के दीप सिहर
निष्प्रभ आलिंगन करते है।

क्यो शेष कहानी मेरी,
सकरुण-उन्मन जल-कण निर्मित?

जाने क्यों इन प्राणो मे,
अगणित लघुतम स्पन्दन पुलकित?



१६

दूर सुदूर प्रभात ।

हेम स्नात सरिता के उर पर
सिहर रही बरसात ।
दूर सुदूर प्रभात ।

घनतम नव घन नभ मे घिर घिर,
चञ्चल शशि सित स्मित मे तिर-तिर,
मुकुलित, नील गगन-सुरसिर में,

विहँस रहे जलजात ।
दूर सुदूर प्रभात ॥

प्यासे लोचन जल-कण झरते,
झिलमिल तारे सरिता मरते,
करुण कसक सी अम्बर-उर मे,

लहर रही मधु-रात।
दूर सुदूर प्रभात॥

अगणित धूमिल दीप बुझाते,
छाया पथ से प्रियतम आते।
स्वर्ग-सुमन परिमल से सुरभित,

बह आई मधु वात।
दूर सुदूर प्रभात॥



# १७

मधुप ! मत वासन्ती मधु घोल ।

मधु कलियों के मधु वन मे घुम,
अपने मधु गुंजन से मत कर

इन प्राणों का मोल ।

मधुप मत वासन्ती मधु घोल ॥

कोमल किसलय मृदुल दलों पर,
ओ निर्दय मधु के मतवाले ।
धीरे - धीरे डोल ।

मधुप ! मत वासन्ती मधु घोल ॥

कोमल सपनों की स्मृति से,
चल चितवन मे मदिर पुलक भर,
रँग मत सजल कपोल।

मधुप ! मत वासन्ती मधु घोल।।

देख समीरण की सिहरन में,
उड जाएँगे कलि जीवन धन।
धीरे पलकें खोल।

मधुप ! मत वासन्ती मधु घोल।।



१८

झर रे निर्झर !

नीरव जीवन, सूने स्पन्दन,
भर रे झर झर मेरा सागर !

झर रे निर्झर !

यह जग दुख से धूमिल पंकिल
नश्वर सुख से उर्मिल फेनिल,
अपनेपन से कलुषित स्वप्निल,

धो उज्ज्वल से उज्ज्वलतर कर।

झर रे निर्झर !!

झरता चल रे चिन्हित अंकित,
छाया पथ में प्रतिक्षण पुलकित,
निर्मम जीवन जल कण-निर्मित,

भर प्राणों में सुधि के चिर स्वर।

झर रे निर्झर !!

झर रे प्रतिपल कल कल रव भर
झरता चल अणु अणु गल गल कर
उज्ज्वल निर्मल मग पर मिट कर,

चल चिर सुख में जीवन लय कर।

झर रे निर्झर !!



१९

अलि, कलि मुकुलित तो होने दो।

उषा रश्मि से तृषित अधर पर
चल चितवन मृदु रोमावलि म,
मलयज की शीतल श्वासो से,

पुलक पुलक कुछ लिख लेने दो।
अलि, कलि मुकुलित तो होने दो ॥

अश्रु सजल सुकुमार दलो पर,
तितली के तिरते पखो से,
नव मधु की मधुरिम भाषा मे,

मधु गानें मुखरित होने दो।
अलि, कलि मुकुलित तो होने दो।।

चिर वसत के मधु पराग मे,
करुण-करुण कोमल किरणो से,
सजग सजल उपवन को क्षण भर,

हँस लहरित सुरभित होने दो।
अलि, कलि मुकुलित तो होने दो।।



## २०

उषा हास मे कलि-जीवन धन ।

पुलकित चकित चपल-चित नव दल
मधु पराग से मधुर प्यार मे,
नयनो का होता उ मीलन ।

उषा हास मे कलि जीवन-धन ॥

मदिर मधुर-मकरन्द हृदय भर,
मलयज निज सुरभित श्वासो से,
रँगता लतिका का कोमल तन ।

उषा हास मे कलि जीवन धन ।

अरुण किरण सुख स्पर्श सुरस भर
झुक झुक गाती नव वय कलिका,
चितवन मे भर शत् शत् छवि वन,

उषा हास मे कलि जीवन धन ॥

•

२१

हिम जल से धो दृग दल
मुकुलित कंज-कली।

अनिल मंदिर गति,
मृदुल दलों पर
शन-शनैं सुख स्पर्श बरसता।

सुरभि पुलिन पर,
सिहर-सिहर तन,
कोमलतर पंखों पर तिरता।

चल चितवन मन मुकुलित
विकसित प्यार पली।

गंध अन्ध उठ,
आया उड अलि,
हृदय मधुर-मधु-प्यास छिपाए।

सुरभि पवन-मिल,
छोड चली कलि,
मधुकर मधु पीकर उड जाए।

सकुचित, मीलित, जीवन मे
मिल चली, चली।

हिम जल मे धो दृग दल
मुकुलित कज कली।

•

## २२

सन्ध्या सुन्दरि ।

रन झुन रन झुन नाची नभ मे,
सन्ध्या सुन्दरि ।

सुभग-अरुण रवि किरण खचित-मुख,
चल-चितवन मे मधु कम्पन भर,
नील गगन के निमल पटपर,
मदिर मदिर मृदु पग धर नाची

सन्ध्या अप्सरि ।

उठने लगा तिमिर रज कण सा,
बिखर चले नूपुर-सम तारक,

खग कल-रव मे छिप कर जाने,
कहा खो गई नतन करती,

स ध्या अप्सरि।
सन्ध्या सु दरि॥

२३

अलि, किसके स्वागत मे नभ ने,
झिलमिल दीप जलाए ?

लीप ज्योत्स्ना से आंगन को,
स्वर्ण-कलश मधु-रस से भर कर,

अञ्जलि मे ले नव मुक्ताहल,
किसने सुमन बिछाये ?

अलि, किसके स्वागत मे नभ ने
झिलमिल दीप जलाए ?

ज्योतिमय कर सागर-लहरें,
किरणों की कोमल जाली में,

दूर क्षितिज के चल चरणों से,
दृग किसने उलझाए ?

अलि, किसके स्वागत में नभ ने
झिलमिल दीप जलाए ?

•

## २४

सागर से भर भर कर जीवन,
    जलद गगन मे घिर घिर आते ।

उमड़ गहनतर दिशा दिशा से
घनतर घनतम अपलक दृग मे,
मलयज मृदु-चल पंखो पर तिर,
    शून्य हृदय मे भर भर जाते ।

सागर से भर भर कर जीवन,
    जलद गगन मे घिर-घिर आते ।

क्षण क्षण क्षणदा प्राणो मे मिल,
मदिर कसक सी मधुर लहर सी
लघु लघु सपने बन बन आती,
जीवन घन जिसमे सो जाते ।

सागर से भर भर कर जीवन
जलद गगन मे घिर घिर आते ।



## २५

अलि किसकी मधु स्मित पुलक पुलक
मेरे मधुवन का चूम चली !

लघु उर मे भर अगणित स्पन्दन
प्रति स्पन्दन मे शत् शत् सपने
अपने बेसुधपन मे पुलकित
मुकुलित कम्पित दृग-कली कली ।

अलि किसकी मधु स्मित पुलक पुलक
मेरे मधुवन को चूम चली !

चंचल श्वासों का शीत अनिल,
जाने किसकी सुधि से क्षण क्षण।
मृदु पुलकित पंखुरियाँ छू छू,
हँसता आता वह कौन छली।

अलि, किसकी मधु स्मित पुलक पुलक
मेरे मधुवन को चूम चली।

•

२६

सजाती झिलमिल तारक दीप,
निशा अपने आँगन में झूम।

सागर उर्मिल मधु गीतों में,
भर ले ज्योत्स्ना का प्यार।
स्वर्ण लहरियों को दुलराने,
वह उतरी तेरे द्वार॥

नाचती सुन्दरता के भार,
गई तेरे अधरो को चूम।
सजाती झिलमिल तारक दीप,
निशा अपने आँगन मे झूम।

रश्मिल-चल निशि की अलको मे,
छवि का स्वप्न—विहार।
नभ गगा के विमल-किनारे
तेरा सुख साकार।

वहाँ ज्योतिमय दिव्याकार
रहा मधु के उपवन मे घूम।
सजाती झिलमिल तारक दीप,
निशा अपने आगन मे झूम॥



२७

मेरी पिक सिहर-सिहर गाती ।

दृग-जल मे मृदु मुक्ताहल झर,
स्वर मे अगणित मनुहारे भर

बैठी छाया-सी अपने मे ।
मरी पिक सिहर सिहर गाती ॥

निश्वासो मे ज्वाला के कण
आहो मे जीवन के लघु क्षण

ढलती रजनी के प्रहरो मे—
मेरी पिक सिहर सिहर गाती ।

अधरो पर जीवन की आशा
नयनो मे प्रियतम की भाषा

स्वप्नो से दृग पथ धो धोकर—
मेरी पिक सिहर सिहर गाती ।



२८

सन्ध्या सुहागिनी।

आती अनन्त पथ से,
नीरव मल्हार गानी
सजकर सुभाषिनी।
सन्ध्या सुहागिनी॥

झिलमिल मृदुल सितारे
बिखरा सुनील-नभ में
जाती सुहासिनी
सन्ध्या सुहागिनी॥

शृंगार कर पुलकती,
मृदु हास से सजा नभ
मुकुलित सु चाँदनी।
सन्ध्या सुहागिनी॥

सुरभित अनिल सिहरता
तिरता सु रश्मियों पर
सुकुमार यामिनी।
सन्ध्या सुहागिनी॥

•

## २९

घिर आया आकाश नयन मे ।

रश्मि-रश्मि मे चचल तारक,
तारक तारक मे प्रकाश-कण
कण कण मे झिलमिल जीवन क्षण
क्षण युग युग के सूनेपन मे ।

घिर आया आकाश नयन मे ॥

३०

आ, मेरे जीवन घन, घिर आ।

शरद् निशा चल स्मित लहरों से,
अप्सरि सी नभ के आँगन में,
झिलमिल तारक दीप जलाकर,
भरती है विधु का मधु-प्याला।
पीजा परिमल पर तिर कर, आ!

आ, मेरे जीवन-धन, घिर आ॥

३१

तुम्हारे अधरो की मुसकान !

उपे ! भरदेती प्राणो मे,
चपल किरणो के कोमल गान
तुम्हारे अधरो की मुसकान !

घुमड श्यामल सावन के मेघ,
बिखरते है जब अम्बर मे।
सुमुखि, किरणो का झूला डाल,
झूलती तुम नभ तरु की डाल।

सिहर भर देती किरणो मे,
किसी को छवि का विमल विहान।
तुम्हारे अधरो की मुसकान॥

तुम्हारी चल चितवन मे जाग,
कनक परियाँ सुन्दर सुकुमार,
विहरती कञ्जो के मधु तीर
खिलाता जिनको मदिर समीर।

हृदय त त्री मे मदिरिम तान।
तुम्हारे अधरो की मुसकान॥

•

३२

कलियो का शृंगार।

अरुण-किरण के स्वर्ण-हास मे,
मधु स्वप्नो का भार।
कलियो का शृंगार॥

घुमड श्यामल सावन के मेघ,
बिखरते है जब अम्बर मे।
सुमुखि, किरणो का झूला डाल,
झूलती तुम नभ तरु की डाल।

सिहर भर देती किरणो मे,
किसी की छवि का विमल विहान।
तुम्हारे अधरो की मुसकान॥

तुम्हारी चल चितवन से जाग,
कनक परिया सुन्दर सुकुमार,
विहरती कञ्जो के मधु तीर
खिलाता जिनको मदिर समीर।

हृदय त त्री मे मदिरिम तान।
तुम्हारे अधरो की मुसकान॥



३२

कलियो का शृंगार।

अरुण-किरण के स्वर्ण-हास मे,
मधु स्वप्नो का सार।
कलियो का शृंगार॥

किसे खोजती उषा सुन्दरी,
मेरे वासन्ती मधुवन मे ?
अपने रश्मिल चपल दृगो से,
सुरभित कलियो की चितवन मे—

भरती किसका प्यार ?
कलियो का शृगार ।।

मलय अनिल सुरभित श्वासो मे,
अलियो का मधु-गुञ्जन भरता ।
कोमल कलियो के नयनो मे,
हिम जल से धो धो कर करता,

किसकी छवि साकार ?
कलियो का शृगार ।।

●

२३

हुआ प्रात आओ हे प्रियतम !

कोमलांगना निशि सित वसना,
डूब गई आलोक-किरण में।
मलय पवन बन उतरो नभ से
इन प्राणों में हे कोमलतम !

हुआ प्रात आओ हे प्रियतम !

कलियों के जीवन धन आए,
ज्योतित नभ का आँगन करते।
आओ प्राणों के आँगन में,
तुम भी हरते घन-जीवन तम।

हुआ प्रात आओ हे प्रियतम!

मुखर विहग रव दिशा दिशा में,
अलि गुञ्जन मधु मय सुमनों पर,
हो जाओ भर रव चिर-मधुतम।
हुआ प्रात आओ हे प्रियतम!



## ३४

प्राणो मे प्राणो के घन ।

नयन ज्योति घुल घुल आँसू बन
मुक्ताफल सी बिखर गगन मे,
झिलमिल नव तारक बन आई ।
आओ घिर चातक के घन ।

प्राणो मे प्राणो के घन ॥

विमल गगन गंगा के तट पर,
स्वर्ण सुमन बिखरा आशा ने,
स्वागत के सब साज सजाए,

आओ जीवन के जीवन !
प्राणों में प्राणों के धन ।

अपने ज्योतित कर पल्लव से,
छू नयनों के घनतर तम को,
हे ज्योतिमय ! विहँस खिलाओ–

मेरे प्राणों का मधुवन ।
प्राणों मे प्राणों को धन ।।



३५

निर्झर ! गिरि के स्वर्ण शिखर पर,
नाच रहे तेरे जीवन-धन ।

तू सुख दुख की लघु लहरो मे,
लिखता अपनी करुण कहानी ।
ढोता भर भर झर-झर स्वर मे,
अपनी ही आँखो का पानी ॥

किसे खोजता युग युग से यह,
प्राणों में भर सूने स्पदन ?

निर्झर! गिरि के स्वर्ण शिखर पर,
नाच रहे तेरे जीवन धन।

भरता गिरि के जड़ प्राणों में,
अपने अ तस्तल की हलचल,
घिर आते हैं तेरे नभ में
तेरी ही आहों के बादल,

तेरी ही अ तर की ज्वाला,
आती है क्षण क्षण क्षणदा बन।

निर्झर! गिरि के स्वर्ण शिखर पर,
नाच रहे तेरे जीवन धन।



३६

सूने नभ मे घिर घिर सपने,
नयनो मे भर भर आते हैं।

सकुच सकुच पुलकित पुलकित से,
विहँस विहँस चिर स्मृतियाँ भर भर,
मचल-मचल आकाश कुसुम अलि,
नयनो मे झर-झर जाते है।

सूने नभ मे घिर-घिर सपने,
नयनो मे भर-भर आते हैं।

श्यामल कोमल चंचल सुरभित,
झिलमिल चल चितवन में मधु भर,
सजल-सजल नभ सुर सरिता में,
तारागण झर झर जाते हैं।

सूने नभ में घिर घिर सपने,
नयनों में भर भर आते हैं।

जीवन की चिर मिलन व्याम अलि,
उमन-उमन तन सिहरन भर,
मुकुलित सबरण नत सिर आँसू,
जाने क्यों झर-झर जाते हैं।

सूने नभ में घिर घिर सपने,
नयनों में भर भर आते हैं।

•

३७

मेरे मधुवन मे।

मुकुलित पुलकित मेरी शेफाली,
मेरे मधुवन मे।

मधु मलयानिल मधुर-मदिर गति,
वह आता है साझ सकारे,
इन्दीवर नयनो से रजनी—
बिखरा जाती झिलमिल तारे,
मेरे मधु नभ मे।

चित्रित विम्बित मेरी शेफाली,
मेरे मधुवन मे॥

सिन्धु हृदय में मधुमय लहरें
अपनी मधु-स्मृतियों की छाया—
मधुर मदिर हिमकर स्मित से रँग,
पुलकित कर देती गुञ्जित या ?
अपने मधु रव में।

संकुचित मीलित। मेरी शेफाली,
मेरे मधुवन में।



२८

घुल गए हिम जल-कणो मे,
इन्द्र धनुषी रग मेरे।

कितने मधुर अभिशाप सञ्चित,
आँसुओं मे घुल गए।
कितने मदिर अवसाद अविदित,
इन दृगो से ढुल गए।

पलक पुलिनो पर सकेंगे,
रह न आकुल प्राण मेरे।
घुल गये हिम जल-कणो से,
इन्द्र-धनुषी रग मेरे॥

सिंधु हृदय में मधुमय लहर
अपनी मधु स्मृतियों की छाया—
मधुर मदिर हिमकर स्मित से रँग,
पुलकित कर देती गुञ्जित या ?
अपने मधु रव में ।

संकुचित मीलित ! मेरी शेफाली,
मेरे मधुवन में ।



३८

धुल गए हिम जल-कणो मे,
इन्द्र धनुषो रग मेरे ।

कितने मधुर अभिशाप सञ्चित,
आँसुओं में घुल गए ।
कितने मदिर अवसाद अविदित,
इन दृगो से ढुल गए ।

पलक पुलिनो पर सकेंगे,
रह न आकुल प्राण मेरे ।
धुल गये हिम जल-कणो से,
इन्द्र-धनुषो रग मेरे ।।

सिन्धु हृदय में मधु मय लहर
अपनी मधु स्मृतियों की छाया—
मधुर मदिर हिमकर स्मित से रँग,
पुलकित कर देती गुञ्जित या ?
अपने मधु रव में।

सकुचित मीलित ! मेरी शेफाली,
मेरे मधुवन में।



३९

अयि ज्योतिमयि ! ज्योतित करदो—
मेरा अन्तर ।

घन-तम निर्जन जीवन-वन मे,
भूल गया पथ भटक रहा हूँ ।
अयि करुणामयि ! करुण किरण से
आओ हँस आलोकित कर दो—
मेरा अम्बर ।

अयि ज्योतिमयि ! ज्योतित करदो—
मेरा अन्तर ॥

तिमिर पट पर मधुर-स्मित से,
चित्र चित्रित कर चले।
इस सिहरती यामिनी में,
स्वप्न घन बन घिर चले।

कौन सा चिर चित्र बन कर
फिर मिलेंगे हे चितेरे!
घुल गये हिम जल कणों से,
इन्द्र - धनुषी रंग मेरे॥







३९

अयि ज्योतिर्मयि ! ज्योतित करदो—
मेरा अन्तर।

घन-तम निर्जन जीवन-वन में,
भूल गया पथ भटक रहा हूँ।
अयि करुणामयि ! करुण किरण से
आओ हँस आलोकित कर दो—
मेरा अम्बर।

अयि ज्योतिर्मयि ! ज्योतित करदो—
मेरा अन्तर॥

पवन बन्द, घन घन घिर छाये,
आकुल अधर, तृषित अपलक दृग,
अयि ज्योतिमयि, सुधा रश्मि से,
पवन पुलक भर आओ भर दो—
मेरा सागर।

अयि ज्योतिमयि, ज्योतित कर दो,
मेरा अन्तर।

•

४०

युग युग से जल-जल कर भी प्रिय,
वह आलोक नही पाया।

घनतम तम मे तुम्हे ढूँढता,
स्नेह हीन यह दीपक जलता,
अपनी लघुता की सीमा मे,
क्षण क्षण अणु अणु गलता चलता।
प्रिय! इन श्वासो के समीर से,
बुझ यह विहँस नही पाया॥

युग युग से जल-जल कर भी प्रिय,
वह आलोक नही पाया॥

## २१

अलि ! गुञ्जन से भरदो कानन।
चली चाँदनी भर किरणों में,
कलियों के कोमल नयन।
बुझा चली तम के आँगन में
निशि झिलमिल दीपक भवन।
लौट चला तम उन्मन उन्मन।
अलि ! गुञ्जन से भरदो कानन॥
मलय-अनिल बह चला मन्द गति,
कोमल कलियों पर तिरता।
सौरभ की शीतल श्वासों से,
छवि उपवन मुकुलित करता।
आओ घिर मधु गीतों के घन।
अलि ! [illegible] से भर दो का[illegible]

## ४२

अलि ! मैं ऐसो बेसुध सोई !

उस अपूर्व ज्योतिर्मय जग से—
जहा निखिल रवि नभ शशि तारक,
सागर मे जल कण से मिलते,
मेरे अलसित पलक पुलिन पर,
पग धरता ज्योतित सपने भर

धीरे - धीरे उतरा कोई ।
अलि, मैं ऐसो बेसुध सोई ॥

उसने अपने कोमल कर से—

विजन हृदय का कोना कोना,
रश्मि हास से धो ज्योतित कर,
युग युग से झरते दृग धोए,
जिनमे मेरे आंसू सोए।

निश्चल नींद बन गया कोई।
अलि, मैं ऐसी बेसुध सोई॥

४३

यह मिलन की रात रे मन !

भर गया इस लघु हृदय मे,
आज सीमा हीन सागर।
मैं मिटी उसमे लहर सी,
वेदना के स्वर सजाकर।

बन गये चिर-मुक्ति बंधन।
यह मिलन की रात रे मन !

नील नभ के झिलमिलाते,
दीप प्राणो मे समाए।
शून्य की सीमा समेटे,
चाँदनी के साथ आए।

खो गये जिसमे नयन घन।
यह मिलन की रात रे मन!

आज युग युग लौटते हैं,
स्वर्ण सुमनो मे सुधा भर।
ला रहे चिर ज्योति क्षण क्षण,
रश्मि लहरो मे छिपा कर।

बन रहे वरदान स्पन्दन।
यह मिलन की रात रे मन!



४४

जाने प्रियतम, कब तुम आए !

अश्रु-सजल अपलक नयनों में,
अंकित कर सुधि के चञ्चल क्षण,
भूल गई शिशु सी सपने मे ।

आए तुम, पर देख न पाए ।
जाने प्रियतम, कब तुम आए ।।

युग युग से झरते प्रतिपल दृग,
भरते छाया पथ मे जल कण ।
आए घिर तुम जीवन-घन बन,

क्षण मेरे प्राणो मे छाए ।
जाने प्रियतम, कब तुम आए ।।

•

४५

प्रिय, मैंने तुम्हे न पहचाना।

मुकुलित कलि की चल चितवन में,
तुम उतरे मृदु मलयज बनकर।
फिर लौट गये चुपके-चुपके,
प्राणों मे प्राण सुरभि भर कर।

मुरझा कर भी पँखुरियों ने,
हे प्रिय; कब तुमको पचाहना।

प्रिय, मैंने तुम्हें न पहचाना॥

सागर की चञ्चल लहरों से,
हिमकर की किरणों में हँसते—
हे ज्योतर्मय ! चुपके चुपके,
तुम उतरे जल ज्योतित करते।

पर अन्तस्तल की ज्वाला ने,
जग कब तुम से मिलना जाना ?

प्रिय, मैंने तुम्हे न पहचाना ॥



४६

कर रे मन, उसका पूजन !

जिसके सकेत सुनहले,
नभ मे तारक बन आते।
निज झिलमिल चल चितवन मे,
स्वप्नो की सृष्टि बसाते।

जिससे ज्योतित जग जीवन !
कर रे मन, उसका पूजन ॥

जिसकी मृदु स्मित ले हिमकर,
दिशि दिशि ज्योत्स्ना बिखराता।
निज स्वर्ण रश्मियो मे भर,
वासन्ती मधु बरसाता।

हँस जाता जीवन-मधुवन !
कर रे मन, उसका पूजन ॥

जो उषा हास मे आकर—
आलोक रश्मियां भरता।
निशि की नीरव श्वासो को,
उज्ज्वल-उज्ज्वलतर करता।

करता जो नयनोन्मीलन,
कर रे मन, उसका पूजन।

कल-रव कर फेनिल सागर,
जिसके सुगीत गाता है।
जिससे मिलने को क्षण क्षण,
व्याकुल हो लहराता है।

भरता प्राणो मे स्पन्दन,
कर रे मन, उसका पूजन।

जिसके अनन्त चरणो को,
धोने घन आकुल फिरते।
चपला की चल चितवन मे,
निज अन्तर्ज्वाला भरते।

करते आंसू से अर्चन।
कर रे मन, उसका पूजन।।

•

४७

अन्तर नयनो मे ज्योतिमय !
चिर ज्योतित भरो।

ज्योतित कर ससृति के लघु क्षण,
आलोकित कर दो जीवन पल।
हे चिर प्रकाशमय ! जग-शिशु के,
तम-मय प्राणो मे उज्ज्वलतर,

नव ज्योति भरो।
चिर ज्योत भरो॥

सूने दीपक के प्राणो मे,
शीतल किरणो का सागर भर,
हे शीतलतम ! कोमल कर से,
निज मधुमय स्मित से शीतलतर,

शशि ज्योति भरो,
चिर ज्योत भरो॥

•